मुझे मुरलीधर की मीरा बनना ही था

ब्रह्माकुमारी दादी प्रकाशमणि जी साकार बाबा के संग के अपने अनुभव सुनाती हैं कि बचपन से ही मैं रोज़ श्रीकृष्ण की पूजा करती थी। छोटेपन से ही मन में यह रहता था कि मैं मीरा बनूँ। मैं मीरा की कहानी जानती थी। हमारे घर के पास ही राधे-कृष्ण का मंदिर था। सुबह और शाम को मंदिर में जाकर पूजा ज़रूर करती थी। शाम के समय मंदिर में जाकर श्रीकृष्ण को झुलाना, सुलाना मेरा नित्य का नियम था। मुझे श्रीकृष्ण से बहुत प्यार था और पूजा भी बहुत प्रेम से करती थी। मुझे लगता था कि श्रीकृष्ण और श्रीराधे भी मुझे बहुत प्यार करते हैं। मैं रोज़ भागवत पढ़ती थी। आप लोग जानते होंगे कि सिन्धी लोग सुखमणी और ग्रन्थ साहिब को मानते हैं। उस समय स्कूल में रिलीजियस (धार्मिक) पिरियड होता था। उसमें सुखमणी, गुरु ग्रन्थ साहिब, रामायण, महाभारत आदि पढ़ाते थे। स्कूल में उनको सुनने और पढ़ने में मुझे बहुत आनन्द आता था। मुझे याद है कि रिलीजियस पिरियड में मैं हमेशा नम्बर वन आती थी और 65% से 70% तक मार्क्स लेती थी। मुझे पढ़ाई से भी बहुत प्यार रहता था। मैं स्कूल में सदा पहला, दूसरा या तीसरा नम्बर लेती थी। इससे कम नम्बर कभी नहीं लिया। इसलिए स्कूल में टीचर्स भी मुझे बहुत प्यार करते थे। खेलकूद में बहुत कम समय देती थी। उसमें मुझे रुचि कम थी। बड़ी बहनों की शादी हो चुकी थी। घर में मैं, मेरी मम्मी और पापा ही थे। मुझे बाहर घूमना, सहेलियों के साथ गपशप मारना, बाज़ार की चीज़ें आदि खाने का शौक पहले से ही नहीं था। सहेलियाँ थीं लेकिन पढ़ाई के नाते, बाक़ी व्यर्थ समय गँवाने की दोस्ती किसी से भी नहीं थी।

लौकिक माँ-बाप भी अच्छे संस्कार वाले थे। सत्संग, धार्मिक कार्यों आदि में रुचि लेने वाले थे। इसलिए मेरे संस्कार भी बचपन से अच्छे ही थे। मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी चंचलता की हो और माँ-बाप ने मुझे थप्पड़ लगाया हो, गुस्सा किया हो। मैंने स्कूल में कभी किसी से न झगड़ा किया, न लड़ाई की। जब मैं 14 वर्ष की हो गयी तब ज्ञान में आयी थी। उस समय मैट्रिक में पढ़ती थी। मैंने ज़िन्दगी में अन्दर जाकर सिनेमा हॉल देखा तक नहीं है। लौकिक पिता जी स्वामी गंगेश्वरानन्द जी के शिष्य थे। जब पिता जी उनके पास जाते थे तो मुझे भी साथ में ले चलते थे। गंगेश्वरानन्द जी ज्योतिष भी जानते थे और मेरे पिता जी से कहा करते थे कि तुम्हारी बेटी शादी नहीं करेगी और मीरा बनेगी। मुझे बचपन से ही खाने-पीने का, देखने-पहनने का शौक नहीं था। मुझे याद नहीं है कि मैंने मम्मी से कभी कहा हो कि मुझे ऐसा-ऐसा फ्रॉक चाहिए, कपड़े आदि चाहिएँ अथवा आज यह खाने का दिल हो रहा है, यह बनाओ। कभी नहीं। छोटेपन से ही मेरे फेवरेट (मनपसन्द) स्लोगन थे कि 'माँगने से मरना भला', 'इच्छा रखना अज्ञान है।' मैं सोचती थी कि गोपियाँ थोड़े ही इच्छा रखती थीं? मीरा थोड़े ही इच्छा रखती थी? वे नहीं रखती थी तो मैं क्यों रखूँ?

हाँ, मुझे एक इच्छा ज़रूर थी कि मैं श्रीकृष्ण का दीदार करूँ या विष्णु का दीदार करूँ। मुझे यही मन में लगन रहती थी कि कब भगवान विष्णु के दर्शन होंगे, कब भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन होंगे। उस समय तो इनको ही भगवान मानते थे ना!

श्रीकृष्ण जी और श्रीसत्यनारायण जी सपने में आने लगे

सन् 1937 में जब मैं मैट्रिक में पढ़ रही थी तो सब विषयह्न इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान आदि अंग्रेजी भाषा में ही पढ़ाते थे। उसी स्कूल में मम्मा भी पढ़ती थी। मैं और मम्मा एक ही बेंच पर बैठते थे। मम्मा के साथ क्लास-फेलो (सहपाठी) के नाते मित्रता थी, बाक़ी उनके बारे में कुछ नहीं जानती थी। मम्मा बहुत स्वीट थी, लम्बे-लम्बे बाल, सुन्दर रूप था। मुझे तो मम्मा बहुत अच्छी लगती थी। उस समय भी दशहरा और दीपावली के

दिनों में तीन सप्ताह की छुट्टियाँ मिलती थीं। हम उन छुट्टियों में मन्दिरों और सत्संगों में जाया करते थे। सवेरे-सवेरे दीवाली के समय हैदराबाद में ठण्डी पड़ती थी। एक बार मैं सोयी हुई थी। सपने में मुझे सामने एक सुन्दर बगीचा दिखायी पड़ा। उस बगीचे में चारों तरफ़ लाइट ही लाइट थी। लाइट भी बहुत सुन्दर थी। दूर-दूर तक बड़े-बड़े फूल-फल लगे हुए थे। उस बगीचे में पहले लाइट आयी। उसी लाइट के बीच से, छोटा-सा श्रीकृष्ण, बहुत दूर से बंसी लेकर नाचता-नाचता मेरे पास आया। जब वह मेरे समीप आया तो मुझे बहुत ख़ुशी हुई। वह और नज़दीक आया। यह देखकर और ख़ुशी हुई। मैं उसको देखती रही और बहुत ख़ुश होती रही। देखते-देखते ही श्रीकृष्ण के पीछे एक सफ़ेद वस्त्रधारी फ़रिश्ता आया। छोटेपन में सत्यनारायण की कथा में सुनते थे कि भगवान बूढ़े के वेष में आता है। जब श्रीकृष्ण के पीछे यह फ़रिश्ता देखा तो मुझे लगा कि मैं भगवान सत्यनारायण को देख रही हूँ। मैं कभी श्रीकृष्ण को देखूँ, कभी उस बूढ़े तनधारी फ़रिश्ते को देखूँ। दोनों मुझे बहुत प्यारे लगते थे। इतने में मैं जाग गयी। मुझे बहुत ख़ुशी हुई। सुना था कि अगर भगवान का दीदार होता है तो किसी को नहीं सुनाना चाहिए। जैसे गूँगा मिठाई खाता है तो उसको बता नहीं सकता, अन्दर ही अन्दर उसका आनन्द लेता रहता है। उसी प्रकार, भगवान का दीदार करने वाले को भी किसी को बताना नहीं चाहिए, बताया तो फिर भगवान उसके पास नहीं आयेगा। इसलिए मैंने भी किसी को नहीं बताया, मम्मी को भी नहीं बताया। लेकिन दोबारा भगवान आया नहीं। फिर मैंने कोठी में जाकर श्रीकृष्ण की माला फेरी, मन्दिर गयी और कहा, हे श्रीकृष्ण! आओ। वो आये नहीं। ऐसे करके दो-तीन दिन बीत गये। मेरी एक क्लास फेलो ॐ-मंडली में जाती थी। एक दिन उसने मुझे कहा कि तुम भी मेरे साथ वहाँ आओ। मैंने कहा, ठीक है। एक दिन उसके घर पर गयी। जब मैं वहाँ गयी तो वह (मेरी सहेली) ध्यान में गयी हुई थी और आँसू बह रहे थे। उसका नाम लीला था। मैं आवाज़ देती रही, लीला, लीला। वह कुछ सुने नहीं, अपनी ही धुन में अपने आप मुस्कराती थी, हाथ ऊपर करती रहती थी। मुझे कोई जवाब नहीं देती थी। मैंने उसकी मम्मी से कहा, मुझे लीला ने बुलाया था लेकिन न बोलती है, न आँखें खोलती है, जवाब भी नहीं देती है। मैं जाती हूँ। उसकी मम्मी ने कहा, बेटी, मुझे पता नहीं इसको क्या हुआ है, जब भी देखो ध्यान में बैठी रहती है। दो-तीन दिन से इसकी यह अवस्था है। उसकी यह अवस्था मुझे बहुत अच्छी लगी। मैं जा रही थी तो उतने में ही वह ध्यान से जागी और मुझे देखकर कहने लगी, रामा चलो, मैं तुमको श्रीकृष्ण का दीदार करा दूँगी। मैंने कहा, श्रीकृष्ण का दीदार कराना क्या मौसी का घर है? मैं इतनी पूजा, भक्ति करती हूँ, मुझे ही नहीं होता तो तुम क्या मुझे दीदार कराओगी ? फिर लीला ने कहा, अभी शाम हो गयी है, कल सुबह 10 बजे चलेंगे। सत्संग में ज़्यादातर मातायें ही आती थीं इसलिए बाबा सुबह 10 बजे सत्संग आरम्भ करते थे। फिर मैं घर गयी।

पिता जी ने ही कहाह्न बेटी, तुम भी दादा के सत्संग में जाओ

बाबा ने शुरू-शुरू में भाऊ के घर में सत्संग आरम्भ किया था। वह घर मेरी सहेली के घर के पास ही था। भाऊ विश्व किशोर बाबा का भतीजा था। बाबा ने पहले-पहले सत्संग अपने भाई के घर में किया, न कि अपने घर में। हम लोग घर से बाहर कहीं भी जाते थे तो माँ-बाप की छुट्टी लेकर ही जाते थे। उसी रात को मेरे लौकिक पिता जी ने कहा, बेटी, अभी तो तुम्हारी छुट्टियाँ हैं, दादा सत्संग कराता है, वहाँ ॐ की ध्वनि लगाते हैं और गीता सुनाते हैं, जाओ तुम भी सत्संग करो। तब मैंने भी कहा, पापा, मेरी सहेली भी कह रही थी कि वहाँ श्रीकृष्ण का दीदार होता है, तुम भी चलो। पिता जी ने कहा, ठीक है बच्ची, तुम ज़रूर जाओ। अगले दिन मैं अपनी सहेली लीला के पास गयी और वहाँ से उसके साथ सत्संग में गयी।

जिनको स्वप्न में देखा था, उन्हें फिर ध्यान में भी देखा

जब हम बाबा के पास पहुँची, उस समय बाबा ॐ की ध्वनि लगा रहा था। वो ध्वनि बहुत अच्छी थी। जाते ही मेरी दृष्टि बाबा के मस्तक पर पड़ी। ऐसा लग रहा था कि मस्तक से कोई लाइट निकल रही है। उस समय मुझे

पता नहीं था कि शिव बाबा कौन है, ब्रह्मा बाबा कौन है। मुझे याद आया कि 3-4 दिन पहले स्वप्न में श्रीकृष्ण के साथ सफ़ेद वस्त्र वाले सत्यनारायण भगवान को देखा था, यह दादा भी वैसे ही हैं। ये मेरे स्वप्न में क्यों आये थे। यह कौन हैं? यह बाबा सत्यनारायण भगवान है क्या? ऐसे सोचते-सोचते बाबा को देखती रही। ऐसे देखते-देखते ॐ की ध्वनि हुई तो मैं ध्यान में चली गयी। वही श्रीकृष्ण, वही शाही बगीचा, वही सत्यनारायण भगवान जिनको स्वप्न में देखा था, उन्हें फिर ध्यान में भी देखा। मैं कितने समय ध्यान में गयी, मुझे पता नहीं क्योंकि जब मैं ध्यान से उतरी तब सत्संग पूरा हो चुका था, सब उठकर चले गये थे। किसी ने मुझे उठाया। देखा तो अकेली थी, लज्जा भी आ गयी। उस समय अभी ध्यान के नशे में ही थी। बाबा कमरे में बैठे थे, उन्होंने मुझे बुलायाह्न आओ बच्ची, आओ। जब बाबा को देख रही थी तो कभी श्रीकृष्ण, कभी सत्यनारायण भगवान दिखायी पड़े। घर आने के बाद भी वही सत्यनारायण भगवान और श्रीकृष्ण दिखायी पड़ते थे। रात-रात नींद नहीं आती थी, उसी ध्यान के नशे में रहती थी। न खाती थी, न पीती थी। माँ घबरा गयी कि बेटी को क्या हो गया। मुझे ध्यान में अच्छा लगता था, छत पर जाकर बैठ जाती थी। ध्यान में जाकर श्रीकृष्ण को देखती थी, स्वर्ग को देखती थी, सत्यनारायण भगवान को देखती थी, गोप-गापियों का नृत्य देखती थी। लगन बढ़ती गयी। पापा भी सोचने लगे कि बच्ची को क्या हो गया। मैं कहती रहीह्न कुछ नहीं, कुछ नहीं, सब ठीक है। उतने में दीवाली आयी। दीवाली की छुट्टियाँ पूरी हुईं। स्कूल में जाना पड़ा। स्कूल में तो जाती थी लेकिन पढ़ाई में मन नहीं लगता था। फिर भी जाना पड़ा। जब मैं स्कूल गयी तो वहाँ मम्मा से मुलाक़ात हुई। मैंने मम्मा से कहा, राधे, आप भी सत्संग में चलो, वहाँ दादा बहुत अच्छा गीता-पाठ करते हैं। मम्मा उससे पहले एक बार गयी थी। फिर दोनों ने पक्का किया कि रोज़ सत्संग में जाना है। मैंने पापा से कहा, मैं स्कूल नहीं जाऊँगी। पापा आँख दिखाने लगे कि क्यों नहीं जायेगी। मैंने कहा, मुझे यह पढ़ाई नहीं पढ़नी है, मुझे ज्ञानामृत पीना है और पिलाना है, मुझे श्रीकृष्ण और राधा के साथ गोपी बनके रास खेलना है। मुझे तो योगिन बनना है। फिर पापा ने कहा कि ठीक है बच्ची, तुम्हें जो पसन्द है हमें भी वही पसन्द है।

बड़ी दीदी मनमोहिनी जी सत्संग में हमसे पहले से ही जाती थी। दीदी लौकिक में मेरी चाची थी। आनन्द किशोर दादा लौकिक में चचेरा भाई लगता था। ये सब सत्संग में जाते थे। मैं दीदी के साथ आती थी तो मेरे पापा और मम्मी भी कुछ नहीं कहते थे। बाद में बाबा ने मुझे भाषण करना, गीत गाना, कोर्स कराना, श्लोक बोलना आदि सिखाया। दुनिया की कोई बात याद नहीं रही।

बाबा, मैं तो श्रीकृष्ण की बन चुकी हूँ

इससे पहले की एक घटना मुझे याद आती है। एक दिन हम तीन सखियाँ सत्संग में जा रही थीं। उस समय हमने रंगीन कपड़े पहने थे और चैन आदि कुछ जेवर भी पहने थे। बाबा का घर बाज़ार के बीचों बीच था। घर नीचे से बहुत बड़ा था। ऊपर एक ही कोठी थी जहाँ बाबा अकेले रहते थे। जब हम बाज़ार से होकर सत्संग के लिए बाबा के मकान में जा रहे थे तो बाबा ने ऊपर से हमें देखा और सन्देश भेजा कि बच्चों को ऊपर आने के लिए कहो। हम घबरा गये कि बाबा हमें ऊपर क्यों बुला रहे हैं! हम गये तो बाबा ने पूछा, बच्ची तुमको कोट-पैण्ट वाले से शादी करनी है या पिताम्बरधारी से शादी करनी है? हमें तो यह प्रश्न समझ में नहीं आया। क्योंकि कोट-पैण्ट क्या होता है और पिताम्बर क्या होता हैह्न यह भी पता नहीं था। यह भी हमें आश्चर्य लगा कि बाबा शादी की बात क्यों कर रहा है। फिर बाबा ने पूछा, बोलो बच्ची, तुमको श्रीकृष्ण से शादी करनी है या कोई लड़के से शादी करनी है? मैंने कहा, बाबा मैं तो श्रीकृष्ण से शादी कर चुकी हूँ और किसी से शादी करने की बात ही नहीं। फिर बाबा ने कहा, अगर श्रीकृष्ण से शादी की है तो ये रंगीन कपड़े और जेवर क्यों पहने हुए हो? उस दिन के बाद आज तक मैंने न जेवर पहने, न रंगीन कपड़े पहने।

कहाँ गये मोरे गिरिधर-गोपाल ?

उस समय हमें ज्ञान की बहुत मस्ती चढ़ी थी। फिर अप्रैल-मई मास में मम्मा को ॐ-मंडली की ज़िम्मेवारी देकर बाबा अपने लौकिक परिवार के साथ काश्मीर चले गये। वहाँ से बाबा ने मम्मा को पत्र लिखा कि ॐ राधे, हैदराबाद में स्कूल बन रहा है और सत्संग में आने वाली माताओं के बच्चे और बच्चियों के लिए जब तक तुम भी बोर्डिंग नहीं बनवाओगी तब तक मैं हैदराबाद नहीं आऊँगा। बाबा ने जाते समय कहा था कि मैं एक मास के लिए काश्मीर जा रहा हूँ लेकिन तीन मास तक बाबा वहाँ रुक गये। हम सब बच्चे दिन-रात रोते रहे कि कहाँ गये मोरे गिरिधर-गोपाल। हम तो पागल-से बन गये थे, सब बाबा-बाबा कहकर तड़प रहे थे। कई मास तक हम जब भी बाबा को देखते थे तो बाबा श्रीकृष्ण ही दिखायी पड़ते थे। कई मास तक मुझे भी श्रीकृष्ण ही दिखायी पड़े। मेरी आँखों में कृष्ण ही रहता था।

15 साल उम्र में ही मैं 10 साल वालों को पढ़ाती थी

मम्मा ने बहुत मेहनत करके स्कूल बनवाया। उसके लिए एक मीटिंग और कमेटी बनायी गयी। मीटिंग में तय हुआ कि दादी अर्थात् मैं उसको निमित्त बन संभालूँ। यह सब होने के बाद मम्मा ने बाबा को पत्र लिखा, तो बाबा हैदराबाद आये। सन् 1937 में बाबा ने बाक़ायदा स्कूल का उद्घाटन किया। उस समय सत्संग में हरेक के नाम से पहले ॐ शब्द लगाते थे। जैसे ॐ बाबा, ॐ राधे, ॐ रामा, ॐ गोपी इत्यादि। पचास के क़रीब बच्चे-बच्चियाँ थीं। उस समय मेरी उम्र थी 15 साल, पढ़ाती थी 10 साल वालों को। बाबा हमें सब कुछ पहले सिखाते थे कि कैसे लेशन (पाठ) तैयार करना है, ख़ुद बाबा कविता और गीत लिखकर देते थे और कैसे पढ़ाना हैह्न यह भी सिखाते थे। बच्चों को कैसे उठाना, नहाना, खिलाना, पढ़ाना और सुलानाह्न बाबा ने सब हमें सिखाया।

बाबा मुझे बहुत प्यार भी करते थे और इज्ज़त भी देते थे

उसके बाद बाबा ने चार माताओं और चार कन्याओं सहित आठ की एक कमेटी बनायी। उसमें बाबा ने अपने किसी भी लौकिक सम्बन्धी का नाम नहीं डाला। दीदी मनमोहिनी, रुक्मिणी दादी, रूप (मम्मा की लौकिक मामी), मोहिन्द्र और चार कन्याओं में मम्मा, मैं, शान्तामणि और सुन्दरी बहन। बाबा ने अपनी सारी प्रापर्टी इन माताओं और कन्याओं की कमेटी को विल कर दी। मेरे में बचपन से ही रूसना, रोना, लड़ना, झगड़ना, चोरी करना, माँ-बाप की बातों का उल्लंघन करना, बड़ों को जवाब देना, अहंकार दिखानाह्न कुछ भी नहीं था, इसलिए बाबा मुझे बहुत प्यार करते थे। कभी भी बाबा ने मुझे न आँख दिखायी, न डाँटा, न पूछा कि बच्ची तुमने ऐसे क्यों किया। कभी नहीं। बाबा मुझे बहुत प्यार भी करते थे और इज्ज़त भी देते थे।

बाबा जब हैदराबाद में हमारे साथ रहते थे तो बीच-बीच में चतुराई करते थे। हैदराबाद से कराची रेल में तीन घंटे का सफ़र था। रात दो बजे ट्रेन जाती थी। बाबा उस ट्रेन में कराची चले जाते थे। हम सुबह उठकर देखते तो बाबा गायब। सब तड़पने लगते थे कि कहाँ गयो मोरा गिरिधर, कहाँ गयो मेरा घनश्याम, ओ गंगा, ओ जमुना, कहाँ गयो मेरा श्याम। बाबा वहाँ जाकर पत्र लिखते थे कि मैं दो दिन रहकर आऊँगा। फिर भारत का विभाजन हुआ तो बाद में हम आबू आ गये।